International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 24-05-2026, Accepted: 23-06-2026, Published: 08-07-2026
Volume 12, Issue 3, 2026, Page No. 6-8

बघेली मिथकीय परम्परा में पौराणिक चरित्र

करुणा सिंह[1], डॉ. प्रदीपकुमार विश्वकर्मा[2]
[1] शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश, भारत
[2] सहायक प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश, भारत

सारांश
भारतीय लोकभाषाओं मेंया पुराणों में किसी भी समाज के जीवंत रहने के लिए आवश्यक प्रणाली, यथा आचार–विचार, मर्यादित व्यवस्था, लोक व्यवहार, सामाजिक सुगठन, नैतिक मूल्य आदिपर व्यापक विमर्श है। लोक हो या पुराण दोनों ही जगह संबंधित कथाओं के हवाले इनके रचनाकारों ने अपनी बात स्पष्ट करने, उनका प्रमाण प्रस्तुत करने के लिए इनमें स्थान–स्थान पर अनेक कथा–प्रसंगों को पिरोया है। ये सभी आख्यान न केवल तत्कालीन समाज का दर्पण हैं बल्कि गंभीर अध्येता और समान्य पाठक दोनों के लिए समान उपयोगी है। लोक की मिथकीय परम्परा में पौराणिक चरित्रों के रूप में पिरोये गए देव, दानव, ऋषि, मुनि, नाग, किन्नर, गंधर्व, अप्सराएँ, चक्रवर्ती सम्राट, महराजा, राजा, विभिन्न तरह के खल और समान्य नागरिक आदि मानव जगत के ही तो हैं। इन कथाओं में पशु–पक्षी, नदियां, पहाड़, वृक्ष आदि भी ऐसे मानवीय और उदात्त स्वरूप में समाने आते हैं कि पाठक विस्मय विमुग्ध हो जाता है । पौराणिक कथाएँ जब लोक में उतरती हैं तो उनमें निहित चरित्रों के खल स्वाभाव को भी लोक बिना लाग–लपेट के अपनी कहन में जोड़ता है यही लोक की लोक होने और बने रहने की सबसे बड़ी पहचान है।
इन तत्कालीन रचनाकारों की अद्भुत कल्पना शक्ति कहें या तत्कालीन उन्नत समाज का प्रमाण कि इसमें वायु में विचरण करने वाले विमान हैं तो सेतु बनाने की तकनीक भी। मनुष्य पशु–पक्षियों से बतियाता भी है तो वह एक दूसरे की सहायता भी करते हैं। तब के विध्वंसक अस्त्र–शस्त्रों और आज के अनेक विकसित हथियारों से साम्य है। लोक की मिथकीय परम्परा या पुरा–कथाओं में मन की गति से यात्रा करने की बात है जिसका जवाब हमारे आज के विज्ञान के पास भी नही है ।
इन तमाम मिथकीय अख्यानों में महज कल्पना की ऊंची उड़ान नहीं है, बल्कि मनुष्य के दैनंदिन जीवन में उपयोगी अनेक ऐसे सूत्र भी सहजता से गुंथे हुए हैं, जो आचरण में उतारे जाने पर किसी को भी मनुष्य श्रेष्ठ बनाने में सक्षम हैं।

मूल शब्दः बघेलखण्ड की मिथकीय परमपरा, लोक आख्यानों में पौराणिक चरित्र, पौराणिक चरित्रों की लोक यात्रा

बघेलखण्ड क्षेत्र में मिथकों की मज़बूत परंपरा है। शिव को यहाँ कहीं–कहीं आदिवासी समूहों के बीच अघोरी बाबा भी कहा जाता है। महाबलीपुरम के राजा राजा बली से जुड़े मिथक में अघोरी बाबा नाम के एक चरित्र से परिचय होता है जो बिलकुल शिव की ही तरह है। यहाँ यह आदिवासी राजा बलि के कुल देवता हैं। जो कि भगवान विष्णु द्वारा राजा बलि से दान में मांगी गई तीन पग भूमि का विरोध करते हैं और बलि को सचेत भी करते हैं तथा इस दरम्यान विष्णु और अघोरा के बीच युद्ध भी होता है। इस कथा के अनुसार राजा बलि और उनकी प्रजा द्वारा अपनी मेहनत से खेती के लिए उपयुक्त बनाई गई भूमि को छोड़कर वन प्रांतर की ओर जाना पड़ता है। कथा में अघोरा शिव भी राजा बलि के साथ यह कहकर चल देते हैं कि –'जब मेरा बेटा, मेरे जानवर यहाँ नहीं रहेंगे तो मैं भी यहाँ से चला जाऊँगा। आदि देव शिव का यह रूप आदिवासी मिथकों में स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है जो की पौराणिक कथाओं से भिन्न है।
भारत की लगभग तमाम बोलियों में मिथकों की भरमार है। विचारणीय बात यह है कि आखिर पौराणिक कथाओं से भिन्न मिथकों की आवश्कता क्यों पड़ी या फिर यह चलन में कैसे आए होंगे ? इन कथानकों की स्थिति या इनकी बुनावट को देखने से यह स्पष्ट होता है कि लोक में सामाजिक न्याय की बनाए रखने के उद्देश्य से यह चलन मे आए या इनकी मूल कथा मे बदलाव आया। या यह भी तर्क लाजिमी है कि यह कथाएँ लोक से उठकर शस्त्रों में परिमर्जित हुई हों।
बर्बरीक के संबंध में भी जो कथा लोक प्रचलित है उसमें बर्बरीक हारने वाले दल का साथ देने की बात करता हुआ दिखाई देता है जो की शास्त्रों में वर्णित उसके चरित्र से मेल खाता है लेकिन लोक का बर्बरीक अत्यंत प्रतिरोधी स्वाभाव का है। युद्ध उपरांत भी वह कृष्ण से याचना नही करता बल्कि उन्हे नाहक ही मानव समाज के पतन का कारण मानता है और अपने पिताओं को मानवद्रोही कहता है। मिथकीय परंपरा में बर्बरीक कृष्ण द्वारा दी गई उपाधि को अस्वीकार करता है। वह हारे का सहारा है लेकिन खाटू श्याम नही है।
नरकासुर के संबंध में बघेली बोली में तरह–तरह कि किवंदंतियां हैं जिसमें से सीधी जिले के चुरहट तहसील स्थित नरकुईं नदी के उद्गम की कथा ज़्यादा प्रभावी और लोक रंजक है। कहा जाता है कि कैमोर पहाड़ से निकली नरकुईं नदी दैत्य राज नरकासुर के खून से निकलीं है। इस सबंध में यहाँ आस–पास के जनजीवन में एक कथा प्रचलन में है जिसमें नरकासुर धरती का पुत्र है लेकिन राक्षसी प्रवित्ति के कारण वह कैमोर क्षेत्र में निवास करने वाले ब्राम्हणों, संत एवं साधुओं को मारकर कैमोर पहाड़ के एक कुंड में डाल दिया करता है जिसे न्ररकुंडी कहते हैं। कलांतर में यह नरकुंडी नरकुईं हो गई। यहाँ एक विशाल पत्थर पर आदिमानव कलीन शैलचित्र (स्त्री के हाँथ का पंजा) भी है जिसे लोग सत्यभामा का पंजा भी कहते हैं। कहते हैं यहीं सत्यभामा ने नरकासुर को मारा था। उसी दौरान चिन्हारी के रूप में उन्होने खून से लथपथ अपना पंजा इस शैल पर छाप दिया था। अभी कुछ वर्षों तक यहाँ निवासरत लोग इस नदी के पानी को अछूत मानते थे उसका पानी नही पीते थे। नरकुईं अपने उद्गम स्थल के पास प्राकृतिक रूप से रहस्यमई है, इसकारण लोग इसे नरकासुर का निवास भी मानते हैं। यहाँ के अभावग्रस्त जीवन में इस तरह के मिथक की आवश्यकता क्यों पड़ी होगी यहाँ के समान्य जनजीवन के बीच हम यह असानी से समझ सकते हैं।
ग्रंथों में बानर नरेश बालि को जिस तरह से चरित्रहीन और अभिमानी राजा के रूप में दिखाया गया है बघेली मिथकीय परंपरा में वह बिल्कुल उसके उलट है। कहीं–कहीं तो बालि को

एक समुदाय विशेष का राजा बताया गया है जो कि बंदर नही बल्कि उस समय की सबसे शक्तिशाली समुदायों में से एक है। एक कथा अनुसार लंका विजय के लिए राम को बालि की सेना चहिये थी लेकिन वह बालि की मृत्यु के पश्चात ही मिल सकती थी क्योंकि रावण की रक्ष संस्कृति और बालि के राज्य सत्ता के बीच मैत्री सबंध थे। अतएव सुग्रीव को राज्य और तारा का लोभ देकर राम ने छल से बालि को मारा। कथानुसार सुग्रीव अच्छा राजा नही था इसलिए बालि के मृत्यु के बाद भी राजसत्ता तारा के हाथ में ही रही। इस तरह के तमाम मिथक समाज में समयानुसार वंचितों को न्याय दिलाने के लिए गढ़े गए जो तब के सत्ता को चुनौती भी देते रहे होंगे।

द्रोणाचार्य के संबंध में यहाँ निवासरत मवासी (कोलो की उपजाति) जनजाति के बीच एक कथा प्रचलन में है कि गुरू द्रोणाचार्य द्वारा अपने प्रिय शिष्य अर्जुन को दुनिया महान धनुर्धर बनाने के लिए एकलव्य का अगूठा गुरुदक्षिणा में नही बल्कि जबरन काट लिया गया था। इस कथानुसार एकलव्य का जन्म एक बेहद समान्य परिवार में हुआ। उसे धनुर्विद्या उसकी प्रेमिका ने सिखाया था। अति अभ्यास से उसने गति पर विजय हासिल की थी। एक दिन पांडवों द्वारा शिकार के लिए छोड़ा गया कुत्ता उस स्थल पर पहुंच जाता है जहाँ एकलव्य अभ्यास कर रहा होता है। एकलव्य को देख वह जोर–जोर से भौकने लगता है। अभ्यास में बाधा पड़ती देख एकलव्य एक साथ पांच बाण कुत्ते के मुह में मारता है। कुत्ते का भौकना पूरी तरह बंद हो जाता है।

उधर जब यह कुत्ता पांडवों के शिविर में पहुंचता है तो वह देखते हैं कि किसी ने कुत्ते के मुँह को बाणों से भर दिया है लेकिन कुत्ते को कहीं खरोच तक नही आई। तब वह उस कुत्ते को गुरू द्रोण के पास ले जाते हैं। कुत्ते की यह स्थिति देख द्रोण अचम्भित होते हैं और अपने पांचो शिष्यों के साथ वह उस धनुर्धर को खोजने निकल पड़ते हैं।

कई दिनों की खोज के बाद एक दिन उन्हे जंगल में एक आदिवासी युवक अभ्यास करते दिखता है। वह उससे पूंछते हैं कि क्या उसने ही इस कुत्ते के मुँह में बाण मारे थे ? युवक कहता है – जी हाँ, लेकिन मेरे बाणों से कुत्ते को कोई नुकसान नही हुआ होगा। वह मेरे अभ्यास में व्यवधान डाल रहा था इसलिए मैंने ऐसा किया। मुझे क्षमा कर दें।

द्रोणाचार्य ने कहा – तुमने यह कैसे किया ? क्या तुम इसे दोहरा सकते हो ? एकलव्य ने कहा जी बिल्कुल मैं इसे बार–बार और कई बार कर सकता हूँ और उसने सामने खड़े कुत्ते के मुँह को दोबारा बाणों से भर दिया।

कहते हैं यह देख द्रोण ने तुरंत अपने शिष्यों को एकलव्य को बंदी बना लेने को कहा और उसी क्षण उसका अँगूठा काट दिया। कालांतर में यह बात आदिवासी समुदायों के बीच पहुंची और सभी आदिवासियों ने अपने जातीय नायक एकलव्य के सम्मान में बाण चलाते समय अँगूठे का इस्तेमाल करना बंद कर दिया।

बघेलखण्ड क्षेत्र के अमरकण्टक और मण्डला की गोंड़ जातियों में प्रचलित एक कथा से स्पष्ट है कि आर्य–संस्कृति के प्रतीक राम को आदिवासी नीची दृष्टि से देखते हैं। इस कथा में लछिमन जती किंगरी बजाते हैं और ब्रह्मचर्य व्रत से रहते हैं। एक दिन किंगरी की ध्वनि से आकृष्ट होकर इन्द्रकामिनी उनके पास जाती है, लछिमन जती के प्रहरी सिंह, भेड़िया, रीछ, बंदर और सर्प को उनकी खाद्य सामग्री देकर वह वहाँ पहुँच जाती है, जहाँ जती का निवास है। इस साधु को देखकर वह काँप गयी, पर उसने प्रेम–प्रदर्शन किया। साधु समाधिस्थ था। उसके ऊपर इन्द्रकामिनी का प्रभाव न पड़ा। न वह हिला, न डुला। इन्द्रकामिनी ने इसे अपना अपमान समझा। उसने बदला लेने का निश्चय किया। लछिमन जती के बिस्तर में लेटकर उसे इधर–उधर कर दिया और अपने कान का एक आभूषण वहीं छोड़कर चली आयी। जब सुबह सीता अपने ब्रह्मचारी देवर के पास भोजन देने गयीं, तो जो कुछ देखा, आश्चर्य हुआ। वह अविलम्ब घर लौट आयीं और राम से सब कहा। राम वहाँ गये और लौटकर गाँव की सभी स्त्रियों को तथा मुकद्दम को बुलवाया। वह कर्णाभूषण सभी को दिखलाया और कहा कि जिस स्त्री के कानों में यह ठीक हो जायगा, उसी से लक्ष्मण की शादी होगी, पर वह किती के ठीक न हुआ। यद्यपि सभी स्त्रियाँ कल्पना कर रही थीं कि यदि यह आभूवण हतारे ठीक हो जाता, तो लक्ष्मण जैसे–सिद्ध जती से शादी हो जाती।

अन्त में वह आभूषण सीता को पहनाया गया। वह उनके ठीक हुआ। इस पर राम लक्ष्मण के ऊपर क्रोधित हो उठे और कहा कि वह हमारी स्त्री को हड़पना चाहता है। उन्होंने लक्ष्मण को अग्नि–प्रवेश की आज्ञा दी, पर वे न जले और एक नवजात शिशु भी न जला, जिसे लेकर उन्होंने अग्नि–प्रवेश किया था।फिर भी राम को सन्तोष न हुआ। उन्होंने जैतपुर के सभी गोंड़ों को एकत्र किया और वहीं के जंगल से लकड़ी कटवाकर आग लगवा दी। उसी में लक्ष्मण कोभोंक दिया। लछिमन जती इस अग्नि से भी बाल–बाल बच आये। राम के षड्यन्त्रों से दुखी होकर जती ने कहा कि 'मैं काले नाग के साथ रह लूंगा, पर तुम्हारे साथ नहीं रह सकता।'

यह कहकर वह चले गये और सचमुच एक काले नाग के साथ रहने लगे। उसने अपनी पुत्री का विवाह इनसे कर दिया। जगड़ा के गोंड़ों में प्रचलित इस सम्बन्ध की एक कथा में इन्द्रकामिनी के स्थान में सीता ही लछिमन का व्रत भंग करने आयी थीं।

महाभारत के इस महत्वपूर्ण चरित्र को ग्रंथों में भले ही इसके कद के बराबर जगह न मिली हो लोक की किवंदंतियों और अलग–अलग जातिगत वार्ताओं में इसे बहुत ही गहराई और संवेदना के साथ प्रस्तुत किया गया है। यहाँ बर्बरीक की पत्नी झांझी भी हैं और उनका अपने पति के प्रति अटूट समर्पण भाव है। बघेलखण्ड क्षेत्र में पुतरा–पुतरी बनाने और बचपन में उसके साथ खेलने की परम्परा है। लोक में इन्हे झांझी और टेसू कहा जाता है। छोटी बच्चियां पहले इन्हे बनाती हैं फिर इनकी शादी करवाती हैं। पुतरा–पुतरी के विवाह पर भोज भी रखा जाता है। फिर एक दिन भारी मन से इन्हें नदी या तलाब में विधि–विधान से बहा दिया जाता है। लोक इन्हे बर्बरीक और उनकी पत्नी झांझी मानता है। इस पर पूरी एक कथा है। इस कथानुसार बर्बरीक का चरित्र लोक के और नजदीक है। वह हमारे और आप के बीच से उठा हुआ चरित्र लगता है। यह एक कथा गीत की तरह है। गीत की यह पंक्तियाँ देखिए जहाँ झांझी महाभारत युद्ध में गए अपने पति टेसू का इंतजार करते हुए कहती है कि –

गइला निहारी नित नीक नहीं लागय
कहाँ गए गौरेला बालम
कहाँ गए गौरेला बालमसजन मोर
कहाँ गए गौरेला बालम
बइरी ऊ कउन जउन हरी सी परनबा
शीश दान माँगी सी बालम

तोंहरे भेंट के कारण हो टेसू भटकेन कोस हज़ार
तू नहीं आये ख़बर नहीं आई बीति गएँ जुग चारि

बइरी ऊ कउन जउन हरी सी परनबा
शीश दान माँगी सी बालम

तो वहीं छेंकुर के ठूँठ पर टँगा बर्बरीक का सिर अपने परिजनों से युद्ध न करने की गुहार लगाते हुए कहता है –

छेंकुर के बिरबा से टेसुआ घोराबइ सुना हो जोधउ न
न करा ररिया झगरिया सनेह राखा न

कहत कहत टेसू सिसकन लागें ढुरकय लागीं न
उहय बड़ी–बड़ी अँसुआ ढुरकय लागीं न

कृष्ण ने बर्बरीक का सिर धड़ से अलग कर दिया है क्योंकि वह हारने वाले दल की ओर से लड़ने की बात कर रहा है। छेंकुर के ठूँठ पर टँगा उसका सिर पूरी महाभारत को देख रहा है। बर्बरीक की पीड़ा युद्ध में हारने–जीतने, मरने–मारने और हस्तिनापुर में बेबाओं के क्रंदन से कहीं ज़्यादा है। जब भीम अपने भाई दुशासन की छाती फाड़ रक्तपान कर रहें हैं तो वह रोते हुए कहता है कि –

धीरे–धीरे छतिया सँघारे भीम दादा हो तोंहारय आहीं न
अरे दुसासन भइया तोंहारय आहीं न

और वहीं सौ भाइयों की बहन दुशाला के शील भंग के समय भी कटा हुआ सिर बोल पड़ता है –

भाई–भाई लड़े पय बहिन काहे फांदे हो दुलारी आहीं न
सउ बिरना के बहिनी के लाजि रखते न

इस कथानुसारइस विशाल नरसंहार का एक मात्र चश्मदीद गवाह बर्बरीक है। उसकी पीड़ा असह है। युद्ध पश्चात सब अपने–अपने लोक चले गए लेकिन बर्बरीक अब भी वहीं रहा। उसकी उपस्थिति युद्ध में होकर भी न के बराबर रही। वह तड़पता रहा लेकिन कुछ कर न सका। कहते हैं युद्ध के कई महीनों बाद जब चील–कौए उसका सिर नोच–नोच कर खाने लगे तो हस्तिनापुर की उसी की वंश–पीढ़ियों की बच्चियों ने उसका सिर छेंकुर के पेड़ से उतार उसे गंगा में प्रवाहित कर दिया। कालांतर में लोक में वही कथा पुतरा–पुतरी के रूप में बच्चों के खेल में शामिल हो गई। पुतरा–पुतरी मात्र एक खेल नही संवेदना है। बच्चियां जिस वर्ष पुतरा–पुतरी को जल में प्रवाहित करती हैं उसके बाद फिर वह बच्चियां इस खेल में कभी हिस्सा नही लेतीं।

निष्कर्ष

लोक विश्वास बघेली जीवनशैली का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो कि हमें विरासत में मिला है। धर्म हमारी संस्कृति का संजीवनी तत्व है और यह लोक विश्वास से निरंतर पुष्ट होता है। अनेक तरह के लोक विश्वासों के साथ पौराणिक चरित्रों का मूल पाठ से इतर लोक में लोक की आवश्यक्तानुसार रच–बस जाना लोक की सहज ग्राह्यता का प्रतीक है। विंध्यांचल का भौगोलिक–प्राकृतिक क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है, जिसमें कैमूर पहाड़ की अनगिनत उपत्यकाएँ, नदिया, नाले, झरने, वन–दुर्ग, खोह, कंदराएँ, घाटियां आती हैं।

प्राप्त जीवाश्मों के आधार पर तथा चित्रित गुहा–गुहरों के साक्ष्यों के प्रमाण स्वरूप कहा जाता है कि यह क्षेत्र डेढ़ अरब वर्ष पूर्व भी मौजूद था और यहाँ वनवासी जातियाँ निवास करती थीं। इन्ही आदिवासी एवं अन्य जातियों के बीच तरह–तरह की लोक देवी–देवता जैसे बड़ादेव, करमादेव, घमसान आदि के साथ–साथ पौराणिक चरित्रों संबंधित वार्ताओं एवं आख्यानों के गायन का चलन है।

बघेली बोली में मुख्य रूप से गोंडो, बसदेवों, आहीरों, कुम्हारों, चमारों आदि जातियों में पौराणिक चरित्रों जैसे राम, कृष्ण, श्रवण कुमार, नल दमयंती, राजा हरिश्चंद्र, दुर्योधन, कर्णा, कुंती, अर्जुन भिम्मा, सती सुलोचना, महादेव आदि सहित ऐतिहासिक लोक नायकों की कथाओं को वार्ता रूप में मिथकीय रूप में लोक कहन की मज़बूत परम्परा है।

संदर्भ

1. शुक्ल, डॉ. भगवती प्रसाद – बघेली भाषा और साहित्य, उ. प्र. इलाहाबाद, साहित्य भवन प्रा. लि., प्रिंट 1971
2. 'विकल' गोमती प्रसाद, बघेली संस्कृति और साहित्य, मुल्ला रामू जी संस्कृति भवन बाणगंगा, भोपाल, के. ए.
3. महर्षि वाल्मीकि–रामायण, वाराणसी उत्तर प्रदेश, गीता प्रेस
4. वेदव्यास–महाभारत, वाराणसी उत्तर प्रदेश, गीता प्रेस
5. भागवत पुराण, वाराणसी उत्तर प्रदेश, गीता प्रेस
6. साकेत, केमला प्रसाद – किस्साड़, ग्राम – बकबा, तहसील– मझौली, जिला– सीधी (म.प्र.)
7. पटेल, सुग्रीव प्रसाद – संवाहकमिथकीय परम्परा, ग्राम – पचोखर, तहसील– चुरहट, जिला– सीधी (म.प्र.)
8. प्रजापति, राम सागर – संवाहकमिथकीय परम्परा, ग्राम – अमरपुर, तहसील– बहरी, जिला– सीधी (म.प्र.)
9. गोंड, हरी सिंह – संवाहकमिथकीय परम्परा, ग्राम – तेंदुहा, तहसील– बहरी, जिला– सीधी (म.प्र.)
10. सिंह, नरेंद्र बहादुर – बघेली लोक सम्पदा संग्राहक,ग्राम – लकोड़ा, तहसील– चुरहट, जिला– सीधी (म.प्र.)